ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 290-294

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

महिला समाज एवं सशक्तिकरण

1. पूनम वर्मा
2. डॉ0 हरिवंश यादव

1. शोध अध्येत्री– समाजशास्त्र विभाग, 2. शोध निर्देशक– टी0डी0पी0जी0 कालेज, जौनपुर (उ0प्र0) भारत

Received-20.12.2022, Revised-26.12.2022, Accepted-30.12.2022 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांशः ***किसी भी समाज का आकलन उस समाज में नारी की स्थिति के आकलन से आसानी से लगाया जा सकता है। नारी जीवन की यात्रा का इतिहास हजारों हजार वर्षो का है। उसकी यात्रा का वर्णन एक अंतहीन गाथा है उसके जीवन का एक ऐसा कौन सा समय में गढ़ा है जिस पर त्रासदी के जाने कितने चित्र अंकित है। कुछ गिनती की प्रतिभावान् स्त्रियों को छोड़ दें, जो समाज में अपवाद स्वरूप हैं, जिनके आधार पर सम्पूर्ण नारी जाति का आकलन उनके साथ घोर अन्याय ही होगा। नारी हमेशा से धार्मिक बन्धनों, रूढ़ियों परम्पराओं और परिवार के धार्मिक बन्धनों में बंदी होकर रह गयी। जिस समाज में जितना अधिक शोषण व उत्पीड़न होता है उस समाज की परतों में आन्दोलन के उतने ही बीज उत्पन्न होते है। इस तरह के समाजों में आन्दोलन की चिन्गारियाँ अन्दर ही अन्दर सुलगती रहती है और एक दिन ज्वालामुखी की तरह फूटती हैं। यदि हम सच्चे अर्थो में देखे तो नव–जागरण काल के समय ही नारी मुक्ति आन्दोलन तथा नारी सशक्तिकरण की शुरूआत हुई। 1498 में सामुद्रिक मार्ग से कालीकट में वास्कोडिगामा का आगमन हुआ। पुर्तगालियों को वह अपने साथ लाया था तो लगभग 150 वर्ष तक वे बिना किसी बाधा के शासन संचालन करते रहे। 17 वीं सदी में डचों में मालाबार और कारीमण्डल समुद्र तट पर व्यापार के केन्द्र बनायें। इसका प्रभाव यह हुआ कि पुर्तगाली शक्ति का पराभव आरम्भ हो गया। इसके साथ ही इनके व्यवसाय को क्षति पहुचने लगी।***

कुंजीभूत शब्द– आकलन, नारी जीवन, अंतहीन गाथा, प्रतिभावान् स्त्रियों, नारी जाति, घोर अन्याय, उत्पीड़न, व्यापार।

व्यापारिक कम्पनियों के बीच प्रतिस्पर्धा और संघर्ष की शुरूआत सन् 1600 में भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना से प्रारम्भ हुई। इस कम्पनी को पुर्तगालियों का अत्यधिक विरोध सहना पड़ा, लेकिन अपने राज–कौशल की राजनीतिक और क्षमता के कारण कम्पनी को सफलता मिली इसी कम्पनी को माध्यम बनाकर अंग्रेजों ने भारत में प्रवेश किया। इन्होंने चेन्नई (उस समय के मद्रास) समुद्र तट के छोर की बस्तियों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। आर्थिक एवं राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए दोनों शक्तियाँ एक दूसरे से संघर्ष करती रही। 'कर्नाटक' युद्ध में अंग्रेजों की जीत तथा फ्रासीसियों की पराजय से धीरे–धीरे अंग्रेजों का शासन सम्पूर्ण भारत पर हो गया।

अंग्रेजों का शासन शोषण, अत्याचार और उत्पीड़न से भरा हुआ था। अंग्रेजों के शासनकाल में भारत की स्थिति दिन प्रतिदिन कमजोर होती गई। देश में गहरे रूप में जमें रूढ़िवाद, जातिवाद धार्मिक कट्टरता और अन्धविश्वास जहाँ देश को कमजोर बना रहे थे, वही स्त्री की स्थिति कमजोर हो रही थी। हजारों सालों की गुलामी ने नारी को नही शिक्षित किया और न आत्मनिर्भर बनाया। वह पुरूषों का दासी बनकर ही रह गई मुगलों के शासनकाल में भारत में सामाजिक कुरीतियों का जंगल बन गया, जिसमें नारी घुटन भरी जिन्दगी जिने लगी। एक निरीह जीवन जीने को विवश हो गई। सामाजिक कुरीतियों यथा बाल–विवाह, सती प्रथा बहु विवाह, अस्पृश्यता, विधवा पुनर्विवाह निषेध आदि ने नारी को दयनीय स्थिति में पहुचा दिया। जहाँ से निकलना उसके लिए आसान नहीं था। इन सबके बीच अशिक्षित महिला समाज में अंधविश्वास और जड़वादी परम्परायें प्रगति के मार्ग में पहाड़ जैसे खड़े हो गये। भारत एक पिछड़ा समाज होकर रह गया। अर्थात चेतनहीन समाज। शिक्षा का स्तर भी निम्न हो गया था। लेकिन कालान्तर में भारतीय समाज और संस्कृतिक पर यूरोपीय सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी का गहरा प्रभाव पड़ा। अंग्रेजी शिक्षा के शिक्षित और प्रशिक्षित नवयुवकों और विद्वानों ने उस समय समाज में व्याप्त कुरीतियों के विरूद्ध आवाज उठानी आरम्भ कर दी। उन सभी ने एक सशक्त आन्दोलन भी शुरू किय।

इस आन्दोलन के ही कारण पुनर्जागरण आन्दोलन को आरम्भ करने हेतु एक ठोस जमीन मिल गई। इससे सामाजिक सुधार के कार्य हेतु प्रेरणा प्राप्त हुई। एक तरफ जहाँ ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन और थियोसोफिकल सोसायटी जैसी संस्थायें स्थापित हुई वहीं दूसरी तरफ ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महादेव गोविन्द रानाडे, फुले, तिलक जैसे समाज सुधारकों और राजनीतिज्ञों को भी प्रभावित किया। इस आन्दोलन की विशेषता थी कि इसने एक ओर सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध आन्दोलन करने की प्रेरणा दी, वही दूसरी ओर राजनीतिक चेतना को बल प्रदान किया।

भारत में स्त्री की समस्याओं का मूल कारण, इसी की कोख में, सदियों से पल्लवित होता आया है। जैसे–जैसे समय बदला नारी की समस्यायें भी बदल गई जैसे आज कन्या भ्रूण हत्या, दहेज और किराए की कोख को लेकर पूरे देश में आन्दोलन चलाए जा रहे हैं। बहुत सी नारी संस्थायें इसमें अग्रणी भूमिका में हैं। इसी तरह 'इमोशनल अत्याचार' भी महिला की अस्मिता

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

विरोधी है, यह विकृत समाज का आईना है। नव जागरण का आंदोलन बंगाल से शुरू हुआ क्योंकि वहाँ पर विधवाओं की संख्या अधिक भी विधवाओं की संख्या अधिक होने के कारण वहाँ बाल–विवाह की प्रथा थी साथ ही विधवा विवाह का निषेध था। तथा अनमेल विवाह का चलन था। लड़की और उसके पति की आयु में दुगने का अंतर होता था। इसमें दो मत नहीं है। कि बंगाल के बुद्धिजीवियों और समाज सुधारकों ने सामाजिक चेतना को देश भी में पहुँचाया, इसीलिए इसकी तुलना यूरोपीय रेनासां से की जाती है।[1] उन परिस्थितियों का विश्लेषण करके रामधारी सिंह दिनकर बताते है कि किस तरह भारत यूरोप से प्रभावित हुआ। उनका मानना है कि नवोत्थान का मुख्य व प्रधान लक्षण अतीत का विश्लेषण हैं यूरोप के विज्ञान ने भारत को अत्यधिक प्रभावित किया इसे भारत ने स्वीकार किया।

हम अपने प्राचीन ज्ञान को नया स्वरूप प्रदान कर आगे बढ़ने लगे। उस समय के विचारकों ने देश में सामाजिक व राजनीतिक जागृति लाने के लिए मंथन करना आरम्भ कर दिया। इस कार्य में उस समय के बुद्धिजीवी वर्ग और सन्त प्रवृत्ति के चिन्तकों की भूमिका सराहनीय है। उन लोगों ने उस समय में समाज में व्याप्त बुराइयो के विरूद्ध आंदोलन आरम्भ किया। वास्तव में उस काल–खण्ड का विश्लेषण करे तो स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय संस्कृति और यूरोपीय संस्कृति के संघात से पूरे देश में उथल–पुथल मची हुई थी एक तरफ जहाँ प्राचीन रूढ़िया, परम्परायें और अंधविश्वास कमजोर हो रहे थे, टूट रहे थे। आस्था और प्रगतिवादी विचारधारा में द्वन्द्व छिड़ा था की किसे त्यागे और किसे ग्रहण करें। नए–नए मूल्यों को प्रादुर्भाव हो रहा था। कहना नहीं होगा कि यह एक संक्रमणकालीन अवस्था थी। एक ऐसी अवस्था जिसमें प्राचीन तत्व बिखर रहे थे लेकिन वे पूरी तरह से समाप्त नहीं होते दूसरी तरफ नई सभ्यता व संस्कृति से उत्पन्न होते है नए विचार और सोच जो एक अलग तरह मानसिकता का विकास करते है। डॉ0 आर0 सी0 मजूमदार ने सही कहा है कि संक्रमण की इस स्थिति में भारतीय समाज में मध्यकाल से आधुनिक काल में परिवर्तित कर दिया है।

19वीं सदी परिवर्तन का समय था यह धार्मिक सांस्कृतिक विश्वासों और अंधविश्वासों के ताने–बाने को तोड़ रही थी। इस दौर ने नव–जागरण आन्दोलन को मजबूती दी। डॉ0 ए0 आर0 देसाई लिखते है कि– "अंग्रेजी शासन के समय में भारत में समाज और धर्म सुधार संबंधी जो आंदोलन हुए वे भारतीयों की उदीयमान राष्ट्रीय चेतना और उनके बीच पश्चिम के उदारवादी विचारों के प्रचार के परिणाम थे इन आंदोलनों ने धीरे–धीरे सामाजिक और धार्मिक नवनिर्माण का कार्यक्रम अपनाया और सारा देश इन आन्दोलनों की चपेट में आया। जाति सुधार या जाति प्रथा की समाप्ति महिलाओं के लिए समानधिकार, बाल–विवाह के उन्मूलन और विधवा विवाह के समर्थन, सामाजिक और कानूनी असमानता के विरोध आदि प्रश्नों पर आन्दोलन हुए।"[2] हमारे देश में धर्म के नाम पर स्त्री के साथ जितने अमानवीय और घृणित कार्य किए गये उनके विरोध में देश का बुद्धिजीवी वर्ग खड़ा हुआ। जैसे– बाल–विवाह, सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह निषेध आदि। नव–जागरण आन्दोलन ने परम्परागत धार्मिक अवधारणाओं को, जो अन्धविश्वासों से सनी थी, उन्हें बदलने का श्रेय प्राप्त किया।

हजारों वर्षो से नारी का जो शोषण हो रहा था, उसमें परिवर्तन ही नहीं आया, बल्कि उन सबको कानून के माध्यम से समाप्त भी किया गया। यह समाज के सुधार तथा कल्याण के लिए सशक्त क्रांति थी, यह सही है कि "सभी समाजों में एक प्रबुद्ध वर्ग होता है जो प्रगतिवादी, विवेकवान होता है यह वर्ग चैतन्यशील और जागरूक रहता है सामाजिक दोषों के प्रति, वह लोक कल्याण की भावना से प्रेरित होकर सामाजिक समस्याओं पर विचार करता है यह रचनात्मक तथा विध्वंसात्मक दोनों प्रकार के विचार रखता है। उसके मस्तिष्क में दूषित संस्थाओं की कुव्यवस्थाओं अत्याचारों तथा अंधविश्वासों का चित्र अंकित होता है, जिनका वह विनाश चाहता है साथ ही उन स्वस्थ एवं कल्याणकारी काल्पनिक संस्थाओं चित्र उसके दिमाग में रहता है। जिन्हें वह समाज के कल्याणार्थ स्थापित करना चाहता है।

प्रबुद्ध वर्ग अपनी मानसिक क्रांति को व्यावहारिक स्वरूप देने हेतु अपने विचारों, प्रवचनों तथा लेखों द्वारा जनमानस के सामने उपस्थित करता है।[3] यह सत्य है कि धार्मिक–सामाजिक ढांचे में जो कुरीतियां थी, उनका उन्मूलन सभी चाहते थे लेकिन बहुत सी बातों को लेकर विरोध भी था। इनके पुनर्जागरण आन्दोलन के माध्यम से भी अलग–अलग थे पर लक्ष्य सभी का एक था– सामाजिक सुधार और इन सुधारों के केन्द्र में भी नारी।

किसी भी सभ्य समाज में जब तक स्त्रियों का शोषण, उत्पीड़न और अत्याचार होता रहेगा वह समाज प्रगति के पथ पर आगे नहीं बढ़ सकता है। राजा राम मोहन राय की सोच में मौलिकता थी उन्होंने नारी जाग्रति हेतु बड़ी चालाकी से समाज में व्याप्त समस्याओं को मुद्दा बनाया। इसी के तहत उन्होंने सती प्रथा को कानून द्वारा समाप्त करने में सफलता प्राप्त की।

ब्रह्म समाज की स्थापना 20 अगस्त 1828 को हुई। इसी संस्था के माध्यम से राजा राममोहन राय ने जनजीवन में व्याप्त जड़वादी अंधविश्वास और रूढ़ियों के विरूद्ध विद्रोह का बिगुल बजाया। सामाजिक सुधार आन्दोलनों को इस संस्था में केन्द्रीय नेतृत्व प्रदान किया। इसका उद्देश्य नारी समाज में शिक्षा का प्रसार, जागरूकता तथा योग्यता का विकास था।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

रामधारी सिंह दिनकर ने ब्रह्म समाज के बारे में लिखा है– ''उनकी पहली अंगड़ाई ब्रह्म समाज में प्रकट हुई और उसके नवोत्थान के आदि पुरूष राजा राम मोहन राय हुएं इसलिए धर्म के अध्ययन और विश्लेषण से वह शक्ति निकालनी चाहिए जिससे हिन्दू क्रिस्तान होने से बच सकते थे, जिससे वे यूरोप के ज्ञान और यूरोप की पद्धति को अपनाकर अपने खोए हुए अधिकार फिर से प्राप्त कर सकते थे। वे धार्मिक सुधारक अधिक थे। उन्होंने जो कुछ किया, उसे हम सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का कार्य कह सकते है।''[4]

उन्होंने स्त्री जाति के उद्धार हेतु और उनके व्यक्तित्व विकास के लिए उन जातिगत व धार्मिक बंधनों को समाप्त करने के लिए संघर्ष किया, जिससे वे पुरूष समाज के अत्याचारों और धार्मिक अन्धविश्वासों से संघर्ष कर सकें। अपनी एक अलग पहचान बनायें। निश्चय ही नारी सशक्तिकरण की दृष्टि से उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। उनके सामाजिक सुधारों के केन्द्र में नारी समस्याये हो रही है। वह पहले व्यक्ति थे जिन्होनें सती प्रथा को नारी जीवन में व्याप्त भारी आर्थिक विषमता से जोड़ा। ये सब नारी सशक्तिकरण को बल प्रदान करने में सहायक बने। अंग्रेजी शासन काल में नारी सशक्तिकरण एक मजबूत आन्दोलन के रूप में उभर कर आया। धर्म की आड़ में धार्मिक शिक्षा के बंधन के स्त्री जाति को पुरूष समाज के अधीन कर रखा था। नारी के साथ जो अमानवीय व्यवहार उस समय हुए उन्हें सोचकर ही आमजन मानस भयभत हो जाता है, सती प्रथा उनमें से एक है। बहु विवाह प्रथा और बाल विवाह स्त्री का खुला शोषण था। इस धार्मिक सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ विद्धतजनों के साथ–साथ आम जनमानस ने भी आवाज उठाई। सभी समाज सुधारकों ने नारी शिक्षा की जोर–शोर से वकालत की। यह एक मात्र तरीका था जिससे उसे सबल स्वावलम्बी बनाकर उसमें चेतना विकसित की जा सकती थी।

ज्योतिबा फूले उन महान समाज सुधारकों में से थे। जिन्होंने दलित, पिछड़ी जाति और शूद्र महिलाओं के लिए पाठशालाओं खोलीं। ब्राह्मणों के कड़े विरोध के बावजूद भी वे नारी शिक्षा के लिए कार्य करते रहे। स्त्री जाति की अनेक परेशानियों का नवजागरण आंदोलन ने निश्चय ही निराकरण किया उन्हें ऊर्जा मिली तथा प्रगति करने की प्रेरणा भी नारी सशक्तिकरण में नारी शिक्षा ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। एक नई चेतना का अभ्युदय हुआ। नारी सशक्तिकरण को जहां विधवा पुनर्विवाह की मान्यता से बल मिला वही बाल–विवाह पर रोक नारी को शोषण से बचाव का एक मजबूत हथियार बना।

वास्तव में भारतीय इतिहास और सांस्कृतिक विकास की प्रकृति द्वंद्धात्मक रही है। उसमें जाति, वर्ण और वर्ग चेतना का अभाव नही है। वे ज्ञान, दर्शन एवं विधाओं में भी नवीन पद्धतियों को आरम्भ करते है नई सोच व विकास की नूतन दिशाएं तलाशते है और एक आन्दोलन की भूमि तैयार करते है। काल कोई भी रहा हो धर्म समाज को हमेशा संचालित व नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण साधन रहा है, धर्म को ही हथियार बनाकर स्त्री जाति को घर की चारदीवारी में बंदी बनाकर रखा गया। उस पर समस्त पारिवारिक उत्तरदायित्व धर्म के आदर्शो के आधार पर लादे गए।

सती जैसा जघन्य अपराध को धर्म के नाम पर ही सही ठहराया गया। यह सत्य है कि सभी प्रकार की जागृति अपने युग की चुनौती स्वीकार करने के परिणामस्वरूप उपजे है। इसीलिए उनमें समूचे युग के संघर्ष की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। प्रत्येक काल के अपने विशिष्ट मूल्य है, जो युग सापेक्ष होते हुए भी कुछ अंशों तक सार्वजनिक मूल्यों के विकास में योगदान देते है। इन्हीं मूल्यों की अभिव्यक्ति मनुष्य के व्यवहारों व सोच में प्रदर्शित होती है। यदि हम सामन्ती संस्कृति को देखे तो हम पाते है कि इसमें नारी का शोषण, अत्याचार और उत्पीड़न अत्यधिक था। मध्यकाल इसका उदाहरण है जिसमें उसकी स्थिति अत्यधिक दयनीय एवं शोचनीय थी। लेकिन चाहे उत्थान हो या पतन का द्वन्द्ध भारतीय जन कभी पराजित नहीं हुआ वह हर बार दुगनी क्षमता से उठ खड़ा हुआ। निष्ठा और मूल्यों के शून्य में भी उसने अपनी चेतना समाविष्ट की है। विकास की कड़ियां भटक भले ही गई हों, टूटी नहीं है। मानव की 'जय यात्रा' प्रगति की दिशा में निरन्तर गतिशील रही है।

आज शिक्षित और जागरूक नारी समाजसेवी संस्था बनाकर एकजुट हो रही है। यह नारियों से चली आ रही नारी शोषण के विरूद्ध अपना आक्रोश प्रकट करने का और पितृसत्तात्मक व पुरूषवादी विचारधारा पर चोट करने का एक अच्छा संकेत हैं स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक रूप में स्त्री को समानता का अधिकार प्राप्त है लेकिन फिर भी उसकी स्थिति में परिवर्तन नहीं हुआ। हर दिन समाचार पत्रों की सुर्खियों में बलात्कार तथा नारी हत्या की घटनायें समाज को झकझोर रही है। ये घटनायें महज महिलाओं को कमजोर साबित करती है या पुरूषवादी सोच को दर्शाती है। इन दमनकारी और हिंसक परिस्थितियों में अत्याचारों के विरूद्ध स्त्रियों की आवाज उठनी ही थी। परिस्थितियों बदलाव लाती हैं सिमोन द बोउआर ने अपनी किताब 'दि सेकन्ड सेक्स' में सिमोन ने दुनिया में प्रायः हर जगह नारी के प्रति अपनाए गए दोहरे मानदण्डों की आलोचना की है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि नारी की मुक्ति का मार्ग नारी के अपने संघर्ष से ही निकलेगा। यह अकारण नहीं है कि सिमोन स्त्री की स्थिति की तुलना नीग्रो की स्थिति से करती है। वे एक निग्रो और एक स्त्री की स्थिति में गहरी समानता देखती है। वे लिखती

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

है, ''दोनों ही जातियां आज पितृसत्ता से मुक्त हो रही है और इनके भूतपूर्व स्वामी इन्हें पुरानी जगह रखना चाहते है इसका कारण भी स्पष्ट है, क्योंकि उसकी जड़े भी नहीं है। अन्य मानव–प्राणियों की भांति स्त्री भी एक स्वतंत्र और स्वायत्व जीव है, लेकिन सदियों से पुरूष अपनी जरूरतों और स्वार्थो के अनुकूल उसे गढ़ता रहा हैं सिमोन की प्रसिद्ध उक्ति है– ''स्त्री पैदा नहीं होती बनाई जाती है।''[5]

'दि सेकन्ड सेक्स' उस घुटन भरी नारी की हजारों वर्षों की परिस्थिति का जीता–जागता दस्तावेज है जिसमें उसका मनचाहे रूप में पुरूष ने शोषण किया है। समाज कोई जड़ वस्तु नहीं है बल्कि चेतन है, और यही चेतना समाज में बदलाव लाती है, जो समाज समय के साथ नहीं बदलते वे ऊर्जाहीन हो जाते है। श्यामाचरण दूबे, जाने माने समाशास्त्री है वे लिखते है, ''समाज जड़ नहीं होता, गत्यात्मक संस्कृति की प्रकृति में अन्तर्निहित होता है।

जनसंख्या का घनत्व, पर्यावरण में परिवर्तन प्राविधिक सम्भावनायें और आकांक्षाओं के नए क्षितिज उनकी संरचना और मूल्यात्मक आधार को नई दिशा और गति देते है। परिवर्तन की चुनौतियों से साक्षात्कार कर सकने में असमर्थता सामाजिक व्याधि बन जाती है। अवरोध की यह स्थिति ऐसे समाजों और उनकी संस्कृतियों को क्षीण कर देती है, उनके अस्तित्व और अस्मिता दोनों पर ग्रहण लग जाता है।''[6]

दूबे जी का यह कथन इस बात का प्रतीक है कि एक लम्बे समय तक परिवर्तन की चुनौतियों को जिस जोश–खरोश से स्त्री–समाज को ग्रहण करना चाहिए था, करने में असमर्थ रही और पुरूषों की दासी बनकर रह गयी। इसके अनेक कारण है जिसकी वजह से स्त्री युग परिवर्तन का लाभ नहीं उठा पाई। इसका मुख्य कारण है शिक्षा का आभाव और स्वावलम्बी न होना। आज यदि वे अपनी आवाज बुलंद कर रही है तो यह आज की परिस्थितियों की देन है, जो उन्हें स्वतंत्र भारत ने प्रदान की है। यह भी उतना ही सत्य है कि आज भारत संक्रमण की स्थिति में है।

नए और परम्परागत मूल्यों में टकराहट उत्पन्न हुई है। इस टकराहट से नई स्थिति व परिस्थिति उत्पन्न हो रही है। नारी समाज में भी उथल–पुथल है। ऊहापोह की स्थिति है, पर एक तथ्य उभरकर सामने आ रहा है कि कम से कम नगरीय स्त्रियां पुरूषों के शोषण के विरूद्ध एकजुट हो रही है। क्योंकि वे शिक्षित भी है और स्वावलम्बी भी होती जा रही है। हमारा संविधान उन्हें सशक्त बनाने के लिए कृतसंकल्प है। हमारे देश के संविधान ने उन्हें पर्याप्त अधिकार दिये है समय–समय पर उनके हितों के संरक्षण हेतु कानून बनाये गये है, अलका आर्य अपने लेख– ''सौ साल की आधी–अधूरी तस्वीर'' में लिखती है, ''अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के सौ साल पूरे हो गए है और इन सौ सालों में औरता की दुनिया कितनी बदली है। इस सवाल को जवाब सपाट नहीं हो सकता।

देश–दुनिया के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक हालात, नीतियां व आन्दोलन इस बदलाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, यह सही है कि महिलायें जिस बराबरी की हकदार है, उससे वे 21वीं सदी का एक दशक गुजर जाने के बाद भी वंचित है, अन्तर्राष्ट्रीय मचों पर गाहे–बगाहे इस पर चर्चा होती रहती है। लेकिन हम जानते है कि खानदान की नाक बचाने के नाम पर आज भी भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में कितनी ही लड़कियों की हत्या कर दी जाती है। दरअसल पुरूषवादी मानसिकता अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के सौ साल पूरे होने के बाद भी मौजूद है और इसके खिलाफ संघर्ष जारी है।''[7]

गांवों में नारी की स्थिति शहरों व महानगरों की नारियों से ज्यादा भयावह है। गांवों में ग्रामीण महिलाओं में अधिकांश को अपने अधिकार, स्त्री संबंधी कानून और स्त्री के लिए संविधान में क्या–क्या लिखा है इन सबकी जानकारी उनको नहीं है। घरेलू हिंसा की घटनायें आये दिन होते ही रहते है, महिला श्रमिकों, खेतिहर, भूमिहीनों आदि के शोषण व उत्पीड़न की कोई सीमा ही नहीं है, जातिवादी ढांचा, प्रभु जातियों का दबदबा निम्न निर्धन घरों की स्त्रियों हेतु अत्याचार व शोषण का सबब बना हुआ है।

नारी सशक्तिकरण की बातें चर्चायें केवल नगरों व महानगरों में होती है, लेकिन यह कहना गलत नहीं होगा कि जबसे पंचायती राज में महिलाओं को शक्ति प्रदान करने हेतु 33 प्रतिशत आरक्षण महिलाओं का हो गया है धीरे ही सही लेकिन उनमें एक जागरूकता आयी है, पंचायत में सीधे भागीदारी से उनमें आत्मविश्वास भी उत्पन्न हुआ है। लेकिन अभी शिक्षा और स्वावलम्बन की कमी से गांव में नारी सशक्तिकरण की दिशा अभी नहीं ले सकी कमोबेश वही स्थिति शहरों में मलिन बस्तियों में रहने वाली नारी, घरों व मकान निर्माण में काम करने वाली, कूड़ा बीनकर रोटी कमाने वाली नारी का भी है।

लेकिन हम भारतीय इस बात से आशान्वित है कि नारी सशक्तिकरण का आन्दोलन आकार ले रहा है। छोटे से लेकर बड़े से बड़े पदों पर आज महिलायें है। आज देश में अनेक सरकारी व गैर सरकारी छोटे–बड़े पदों पर उनकी भूमिका की सराहना की जा रही है। लेकिन जब हम आंकड़ों पर गौर करते है तो हम पाते है कि देश की आधी आबादी वाली नारी के

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- IV, Issues-26, YEAR- Oct.-Dec.-2022

लिए यह आंकड़ा नगण्य है। फिर इतना तो कहा ही जा सकता है उनमें जागरूकता आयी है शिक्षा का स्तर बढ़ा है, स्वावलम्बी बनने की दिशा में अग्रसर है ये सभी उदाहरण उसके बढ़ते कदमों की आहट है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सेन अमित, आन द बंगाल रेनासां, नेशलन बुल एजेन्सी, कोलकाता (1957) पृ0–01.
2. देसाई, ए0आर0; भारतीय राष्ट्रवादी की सामाजिक पृष्ठभूमि, द मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, (1977) पृ0 (191).
3. पाण्डे, श्रीनेत्र, भारत का सम्पूर्ण इतिहास, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1985–86 पृ0 85–86.
4. सिंह, रामधारी दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1956 पृ0– 447.
5. मधुरेश, वांड्.मय, अंक 4, दिसम्बर, 2007 पृ0–10, अलीगढ़।
6. दुबे, श्यामाचरण समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2000, पृ0–124.
7. अलका आर्य, राष्ट्रीय सहारा, 8 मार्च 2011.

*****